ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-3* Issue-11* February- 2019
Anthology : The Research

लोकतांत्रिक भारत में : एक अध्ययन

आशा वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
डी0बी0एस0 कालेज,
कानपुर

सारांश

'लोकतांत्रिक भारत' में डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त का काव्य–संग्रह है। जो अभिलेख प्रकाशन बरेली से सन् 2009 में प्रकाशित हुआ। बहुमुखी प्रतिभा के सारस्वत मनीषी, अप्रतिम जिजीविषामय व्यक्तित्व के धनी, प्रज्ञापुरुष डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त एक महान चिंतक, श्रेष्ठ कवि–लेखक, चर्चित समालोचक तथा सुविख्यात शोध निर्देशक हैं। आपने अपने समीक्षात्मक ग्रन्थों एवं शोध कृतियों का प्रणयन कर न केवल समीक्षा–जगत् में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है, वरन् 'मन–पाँखी', 'स्वर्ण जयन्ती वर्ष', 'गीत–श्री', 'ऋतुबसंती', 'संग्रहमंथन' तथा 'लोकतांत्रिक भारत में' जैसी महत्वपूर्ण काव्य–कृतियों का सृजन कर समकालीन हिन्दी काव्य–जगत् में स्वयं को उच्चासन पर स्थापित किया है। डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त ने इस श्रेष्ठ काव्य कृति का सृजन कर न केवल समकालीन हिन्दी साहित्य को महत्तवपूर्ण योगदान दिया है वरन् समकालीन साहित्य के स्वरूप को और अधिक विशद्ता एवं व्यापकता प्रदान की है। डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त जी ने अपनी कविताओं में सामाजिक ह्रास, मानवीय अवमूल्यन, प्रेम, प्रकृति, मार्क्सवादी जीवन दृष्टि, उपेक्षिता नारी, सांस्कृतिक एवं मार्मिक विघटन, आरक्षण जैसे विविध पहलुओं के साथ–साथ भ्रष्टाचार, आतंकवाद, सती प्रथा, भ्रूण हत्या, दहेज हत्या, यौन–शोषण, आर्थिक संकट जैसी भयानक समस्याओं को अभिव्यक्ति प्रदान की है। डॉ0 गुप्त जी ने समस्याओं का समाधान भी तलाशने का प्रयास किया है। आपने भारतीय लोकतंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार को इन समस्याओं का जनक माना है। लोकतंत्र की असफलता को देखते हुए आप लोकतंत्र की प्रासंगिकता पर ही प्रश्नचिन्ह लगा देते हैं।

मुख्य शब्द : लोकतांत्रिक, भ्रष्टाचार, आरक्षण, प्रासंगिकता, सृजन, संविधान, अराजक, प्रतिशोध, अनाचार, गृहस्वामिनी, शोषण, ज्वलंत, आकर्षित, गणतंत्र, आरक्षी, अभिशप्त, निरक्षर, सम्मानित, सशक्तिकरण, पर्दाफाश, ग्रामीणांचल, स्वकेन्द्रित, सभ्यता।

प्रस्तावना

डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त जी ने लोकतांत्रिक भारत में काव्य कृति के संभाषण में लिखा है – इस कविता संग्रह में सन् 1997 से 2006 तक के मध्य लिखित सत्तर कविताएँ हैं। मुक्त छन्द में लिखित इन कविताओं में प्रेम, दर्शन, समाज, परिवार, जीवन, संघर्ष, राजनीति, लोकतन्त्र, आतंकवाद, शिक्षा, भ्रष्टाचार, नैतिकता आदि अनेक विषयों पर अनुभूतिपरक जीवन्त अभिव्यक्ति प्रस्तुत हुई है।[1]

प्रेम सृष्टि की चिरन्तन आदि शक्ति है, प्रेम की उपेक्षा जीवन की उपेक्षा है। प्रेम के बिना जीवन कहाँ? प्रेम जीवन का आधार है या यूँ समझिए की सृष्टि का आधार ही प्रेम है। डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त जी प्रेम के लिए त्याग, समर्पण तथा बलिदान अनिवार्य शर्त मानते हैं, यदि व्यक्ति के हृदय में इन गुणों का वास नहीं है तो वह प्रेम करने में सफल नहीं हो सकता है, क्योंकि प्रेम एक पूजा है जो निष्काम भाव से की जाती है –

''त्याग, बलिदान, समर्पण और
पूजा है प्यार
प्यार वरदान है विधाता का
सृजन का आधार

सुरभित फूलों में बासंती बयार
और कलियों की मुस्कान है – प्यार।[2]

आधुनिक युग मशीनी युग है। आज का आदमी मशीन बनकर रह गया है, जिस कारण सामाजिकता का क्षरण होने लगा है और व्यक्ति स्वार्थी एवं स्वकेन्द्रित होता जा रहा है। ग्रामीणांचल में तो कुछ सामाजिकता एवं प्रेम–भाव बचा है, परन्तु महानगरीय सभ्यता में तो सामाजिक मूल्यों का पूरी तरह विघटन हो चुका है। डॉ0 गुप्त एक भावुक एवं संवेदनशील कवि हैं। आप अपने इष्ट मित्रों के साथ अपना समय गुजार कर उसे यादगार बनाना चाहते हैं परन्तु उनकी प्राणप्रिया तो उनसे दूर है, उसका अभाव डॉ0 गुप्त को अखरता रहता है। वह बार–बार अपनी प्रियतमा को याद करते हैं, और वे जितना याद करते हैं उनका अकेलापन और गहराता जाता है। इस अकेलेपन की पीड़ा इतनी कष्टप्रद हो जाती है, कि असहनीय होने लगती है –

एकान्त बहुत सालता है।
बिना मौत मारता है – एकाकीपन
जब भी नहीं मिलता साथ, तेरा
बहुत दुःख देता है – एकान्त।[3]

स्वतंत्रताप्राप्ति के पश्चात् भारतवर्ष को सुचारु रूप से विकास के मार्ग पर प्रशस्त करने के उद्देश्य से यहाँ लोकतंत्र की व्यवस्था लागू की गयी। इस व्यवस्था के अन्तर्गत शक्तियों का विकेन्द्रीकरण हुआ। शासन को चलाने वाले शासक जनता के माध्यम से चुने जाने लगे। संविधान बनाकर भारतीय जनता के लिए समानता का ध्यान रखते हुए उन्हें स्वतंत्रताएँ दी गई –

लोकतांत्रिक भारत में
है छूट सभी को मिली हुई
सब कुछ करने की
संविधान देता आजादी
मनमानी सबको करने की
सभी हैं स्वतंत्र
कि चाहें जैसे रहें यहाँ पर
मन चाहे सो, खा सकते हैं
गालियाँ भी दे सकते हैं,
भारत माँ को।[4]

भारतीय लोकतंत्र की यह बहुत विडम्बना है कि जिस लोकतंत्र ने सभी को बराबरी का दर्जा दिया जिस लोकतंत्र ने सभी को विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी, आज उसी लोकतंत्र को राजनेता हकीकत बयान करने से रोकता है।

लोकतंत्र की व्यवस्था जिस विकास के उद्देश्य से लागू की गयी थी वह अपने उद्देश्य से भटक गयी है। क्योंकि लोकतंत्र की शक्तियाँ ऐसे व्यक्तियों के हाथों में जा चुकी हैं, जो स्वयं का विकास चाहते हैं, समाज का नहीं। यही कारण है कि समाज के हित की वकालत करने वाले व्यक्ति पर प्रतिबंध लगा दिया जाता है। आज जनसेवक?, जनसेवक नहीं रह गये हैं, अब वे तानाशाह बन चुके हैं। ये तानाशाही शासक भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबे हुए हैं। ये भ्रष्टाचारी शासक जमकर अपने अधिकारों का दुरुपयोग कर रहे हैं और भोली–भाली जनता इनके चंगुल में फँसी हुई है। इन शासकों की गलत नीतियों के कारण ही अमीरी–गरीबी की खाई लगातार बढ़ती जा रही है। स्थिति इतनी बिगड़ चुकी है कि हम लोग स्वतंत्र होकर भी आज स्वतंत्र नहीं है और नाना प्रकार के बंधनों में बँधे हुए हैं। यही कारण है कि समाज में समता का अभाव है, ''समता उसी समाज में होती है, जो स्वतंत्र हो और समाज वही स्वतंत्र होता है जिसका आम व्यक्ति स्वतंत्र हो और अपने स्वातंत्र्य के उपयोग के लिए ही सामाजिकता का वरण करता हो।''[5]

आज ईमानदार एवं सत्यवादी व्यक्ति परतंत्र है जबकि गुण्डे मवाली, बलात्कारी, भ्रष्टाचारी जैसे अराजक तत्व खुलेआम घूम रहे हैं। इन अराजक तत्वों की करतूतों के कारण समाज भय, आशंका, दहशत से आतंकित हो रहा है। इस घुटन भरी जिन्दगी को हम कब तक जीते रहेंगे? डॉ0 गुप्त की कविताओं में समाज के इस दर्द को आसानी से अनुभव किया जा सकता है –

भारत की देव संतानें
आधुनिक व्यवस्था में
दलित शोषित और निरक्षर हैं।
महिलाएँ जीती हैं, अतीत में
नयनाएँ जलाई जाती हैं जीवित
हो रही है राख सतीत्व के नाम पर
जन्म लेने से पूर्व अभिशप्त वरण करने को मरण
भ्रूण हत्या के रूप में
क्लीनिक बना दिए गये कत्लगाह
सद्य विवाहिताएं कर रही आत्मदाह
दहेज की वेदी पर।
यौनशोषण के अजब–गजब रूप–
आरक्षी दल बने संगठित गिरोह
असुरक्षित जनजीवन उनकी अभिरक्षा में
बेरोजगारी
बंधुआ मजदूरी
कुसुमित शिशुओं का बन जाना बाल श्रमिक
लगता है –
हमारा गणतंत्र एक भग्न प्राय महल
जगमगा रहा कूड़े के ढेर पर।[6]

डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त का विचार है कि हमारा देश भ्रष्टाचार के पंजों में बुरी तरह जकड़ता जा रहा है। नेता, अधिकारी, कर्मचारी सभी भ्रष्टाचार में संलिप्त हैं। यही भ्रष्ट लोग 'आराम हराम है' का नारा लगाकर हराम

की खाते हैं। हर विभाग में भ्रष्टाचार इस तरह काबिज हो चुका है कि ईमानदारी कर्मचारी का काम पर पाना मुश्किल हो गया है और नेतागिरी, चमचागिरी करने वाले अयोग्य होने पर भी पुरस्कारों से सम्मनित किये जा रहे हैं। डॉ0 गुप्त इन भ्रष्टचारियों की पोल खोलने में कतई संकोच नहीं करते हैं। अपने मुखर शब्दों में वे लिखते हैं–

यहाँ, पुरस्कृत होते हैं वे –
जो अध्यापक हैं – पर पढ़ाते नहीं
हो जाते हैं रीडर – पर पढ़ना छोड़ देते हैं
वर्षों तक धंधों में लगे रहते हैं –
करते हैं कोचिंग, पत्रकारिता या नेतागिरी
करते हैं नवनीत–लेपन, चमचेबाजी, गिरोहबाजी
और पाते हैं –
पुरस्कार, प्रशंसापत्र, प्रतिष्ठा
हमारे देश में सम्मानित हैं केवल ये
केवल ये।[7]

भारत की सरकारों की गलत आर्थिक नीतियों के कारण अमीर आदमी और अमीर होता जा रहा है, और गरीब आदमी और गरीब। महँगाई लगातार बढ़ती जा रही है। आम आदमी का जिन्दगी बसर कर पाना मुश्किल होता जा रहा है। भारतीय राजनीति में नई आर्थिक नीति के नाम पर जो कुछ भी हो रहा है, वह एक तरह से नई आर्थिक गुलामी का ही संकेत है। डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त आने वाली आर्थिक गुलामी के प्रति चिन्तित दिखाई देते हैं। उनकी कविताओं में आम आदमी को आर्थिक संकट से जूझते हुए देखा जा सकता है। इस आर्थिक विपन्नता ने बच्चों से उनका बचपन छीन लिया है और वे मासूम बच्चे इसी उधेड़बुन में लगे रहते हैं कि किस प्रकार दो वक्त की रोटी का जुगाड़ किया जाये –

''भुट्टे ले लो, भुट्टे'
साइकिल से उतरा, देखा –
दस–बारह साल की
प्रायः अर्द्धनग्न लड़की
भुट्टे भून रही है,
मुँह लाल हो रहा लपटों से
''भुट्टे ले लो, भुट्टे'
भुट्टे भूनती लड़की, आवाज लगा रही थी।[8]

हमारा देश देवताओं की कर्मस्थली रहा है। भारतीय ग्रन्थों में वर्णित है, ''यत्र नार्यस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता।'' अर्थात् जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। यह सूक्त वाक्य सैद्धान्तिक रूप से अच्छा लगता है परन्तु व्यावहारिक रूप से इसकी चमक गायब है। व्यावहारिक रूप से नारी पहले भी शोषित है। नारी सशक्तिकरण के लिए तमाम संस्थाएँ बनी, आन्दोलन चलाए गए, परन्तु सभी के सभी खोखले साबित हुए। डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त ने 'लोकतांत्रिक भारत में' इसी अलोकतांत्रिक व्यवस्था का पर्दाफाश किया है कि नारी आज भी उपेक्षित, पीड़ित, शोषित तथा बंदिशों की शिकार है–

बालिका,
युग–युग उपेक्षिता
मार–पीट, काम करे घर भर का
और ऊपर से सीख –
चले सिर झुकाकर
बने स्त्री, यानी देह
यानी कोख कि होना है रजस्वला।
कशा प्रतिबंधों की –
लाँघें न देहरी कभी घर की लज्जा की
बनी रहे कठपुतली, शील–मर्यादा की
जन्मी पत्नी इस घर में, है लेकिन पर घर की
चले झुककर,
नहीं करे प्रतिशोध अनाचार का भी
होकर गृहस्वामिनी करती काम दासी–सा।[9]

आजकल अखबारों में आये दिन निकलता रहता है कि नारी सशक्तीकरण हो रहा है, नारी उत्थान किया जा रहा है, नारी प्रगति के पथ पर अग्रसर है, जैसे तमाम नारे लगाए जाते हैं, परन्तु सवाल इस बात का है कि क्या वास्तव में नारी–उत्थान हुआ है? क्या उसकी स्थिति में कुछ सुधार आया है? क्या उसका शोषण नहीं किया जा रहा है? तमाम सवाल डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त के हृदय को झकझोर देते हैं। आपका विचार है कि केवल नारे लगाने भर से नारी–उत्थान नहीं हो जाता है क्योंकि नारी आज भी पीड़ित और शोषण का शिकार है –

वह चिल्ला रही थी
चीख रही थी और तड़प रही थी
मार डाला
जलाकार मार डाला पति ने
हत्यारा है वह।[10]

आतंकवाद आज के युग की ज्वलन्त समस्या है। इन आतंकवादियों ने भारतवर्ष को अपना निशाना बनाया है। चूँकि साहित्यकार युग बोध से प्रभावित होता है तो भला इस ज्वलंत मुद्दे से कैसे अप्रभावित रह सकता है। डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त जी ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से इस विकराल समस्या की ओर पाठक वर्ग का ध्यान आकर्षित किया है।

बहाते हैं खून निरपराधों का
लगाते हैं आग घरो–गलियों में
जलाते हैं निर्दोषों को जिन्दा ही
जीने में कम, मारने में विश्वास रखते हैं अधिक
ये जहाँ भी हैं, दुनिया में यही करते हैं
न जीते हैं, न जीने देते है।[11]

डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त का विचार है कि इन तमाम समस्याओं को उत्पन्न करने वाला भ्रष्टाचार है। भ्रष्टाचार के मूल से ही ये तमाम समस्याएँ उपजी हैं। यदि भ्रष्टाचार पर काबू पा लिया जाये तो निश्चित रूप से मानव सुखमय जीवन बिता सकता है और देश में अमन चैन स्थापित किया जा सकता है। पर क्या भ्रष्टाचार पर काबू पाना इतना आसान है। हाँ आसान तो नहीं है पर असम्भव भी नहीं है। इसके लिए हमें स्वयं भ्रष्टाचार से दूर रहने का संकल्प लेना होगा और अपने दायित्व–बोध को जानना होगा तथा ईमानदारी से अपने–अपने दायित्वों का निर्वहन करना होगा –

क्यों न लेते संकल्प –
कि गलत काम न करेंगे, न करने देंगे
झूठ, बेईमानी और भ्रष्टाचार से घिरे रहने पर भी
भ्रष्टाचार न ही करेंगे, न सहेंगे
अधीनस्थों को सताएँगे नहीं
नहीं सहेंगे शोषण रंचक भी
नहीं फँसने देंगे युवकों को चक्र में
शोषण–बेईमानी के
करेंगे काम–कायदे–कानून से
नहीं लेंगे रिश्वत न देंगे
निर्वहन दायित्वों का शुचिता से करेंगे।[12]

डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त एक संवेदनशील कवि हैं, जिन्होंने वर्तमान युग–बोध को अपनी कविताओं का विषय बनाया है। आपने न केवल सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा धार्मिक समस्याओं को अपनी कविताओं में उठाया है, वरन् नारी–शोषण, दहेज हत्या, भ्रूण हत्या, बेरोजगारी, बँधुआ मजदूरी, बाल मजदूरी, आतंकवादी जैसी समस्याओं का विषय बनाकर समसामयिक परिदृश्य उपस्थित कर दिया है। मानवीय मूल्यों का विघटन, मशीनीयुग में व्यक्ति का अकेलापन, लोकतंत्र की असफलता तथा ईमानदार एवं सत्यवादी व्यक्ति की विचार, अभिव्यक्ति पर लगे प्रतिबंध तथा लगातार होते जा रहे वनों के कटान के प्रति डॉ0 डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त जी ने गहरा दुःख व्यक्त किया है। आपने अपनी कविताओं में मात्र समस्याओं को उठाकर ही अपने उद्देश्य की इतिश्री नहीं मान ली बल्कि इनका समाधान खोजने का भी सफल प्रयास किया है। निःसन्देह डॉ0 सुरेशचन्द्र गुप्त एक उच्चकोटि के समकालीन कवि हैं और 'लोकतांत्रिक भारत में' एक उच्च स्तरीय समकालीन काव्य कृति हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, सम्भाषण*
2. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–19*
3. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–16*
4. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–95*
5. *संस्कृति और समाज – डॉ0 राजाराम पाल, समता प्रकाशन, जयपुर, पृ0–08*
6. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–50*
7. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–29*
8. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–91*
9. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–77*
10. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–35*
11. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–85*
12. *लोकतांत्रिक भारत में – डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त – अभिलेख प्रकाशन 2009, पृ0–21*